UGC Approved Journal
Research Link
Since March 2002
An International, Registered & Referred Monthly Journal :
Hindi Literature
Research Link - 162, Vol - XVI (7), September - 2017, Page No. 130-131
ISSN - 0973-1628 ■ RNI - MPHIN-2002-7041 ■ Impact Factor - 2015 - 2.782

हबीब तनवीर के रंगकर्म में अनुस्यूत छत्तीसगढ़ी लोक

प्रस्तुत शोधपत्र में प्रसिद्ध रंगकर्मी हबीब तनवीर के रंगकर्म में छत्तीसगढ़ी लोक का अध्ययन किया गया है। हबीब तनवीर ने अपनी लोक संस्कृति को कभी नहीं छोड़ा। अपने रंगकर्म में उन्होंने छत्तीसगढ़ लोक को पूरी तरह रुपायित किया, चाहे भाषा के स्तर पर हो या लोक गीत, लोक नाट्य, लोक संगीत, लोक कथा के स्तर पर हो। उन्हें अपने नये मुहावरे की तलाश की ठौर यहीं आकर प्राप्त हुई, जिसने उन्हें और उनके साथ ही छत्तीसगढ़ के नाम को बुलंदियों के मकाम तक पहुँचा दिया। ये उसी लोक का कमाल था, जिसके कारण उनके नाटक कभी भी दर्शकों के मोहताज नहीं हुए। आज उनके नहीं रहने पर छत्तीसगढ़ी लोक के आंगन में धूल का गुबार छाया हुआ है, जिसे बुहारना अपनी संस्कृति को बचाने के लिए बेहद ज़रुरी है। शासन के नीति निर्धारकों को यह समझाया जाना बेहद आवश्यक है कि उनके संरक्षण और पहल के बिना अपनी समृद्ध लोक-संस्कृति वैश्वीकरण के दौर में चाहकर भी बच नहीं सकती, जिसे बचाया जाना आने वाली पीढ़ी के लिए बेहद अनिवार्य है।

डॉ.वंदना कुमार

लोक नाट्य, लोक गीत, लोक संगीत, लोक साहित्य लोक जीवन का आईना होते हैं। लोक साहित्य में स्थानीय लोक जीवन की परंपराओं, उनके रहन–सहन रीति–रिवाजों और क्रिया व्यापारों की स्पष्ट छवि दिखाई देती है। लोक जीवन में जो कुछ भी घटित होता है, अच्छा–बुरा, उतार–चढ़ाव, हानि–लाभ, दुख–सुख, यही सब लोक नाट्य के कथानक बनते हैं। लोक अपने परिवेश में जो देखता है, महसूस करता है, हँसी–खुशी के जो सपने बुनता है, उन दृश्यों, घटनाओं, आशाओं और विश्वासों को लोक रंग में साकार करता है। अभिनय और संवादों के माध्यम से जो मर्म लोकमंच पर रूपायित होता है, वही कहलाता है, 'लोक नाट्य'।

छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य की परंपरा छत्तीसगढ़ के गाँवों में यहाँ के जन–जन में बहुत गहरी रही है। जन रंजन और लोक शिक्षण का सर्वाधिक लोकप्रिय और प्रभावशाली स्वरूप लोक नाट्य में समाया हुआ है। लोक नाट्य का मूल आधार रहा है, नाचा। हास्य और व्यंग्य की प्रबल धारा के साथ प्रचुर सांगीतिक वैभव नाचा की विशेषता रही है। नाचा को छत्तीसगढ़ की जनता रात–रात भर उतावली और बावली होकर देखती रही है। छत्तीसगढ़ में जन मनोरंजन के लिए सर्व सुलभ माध्यम रहा है नाचा। इससे बढ़कर यह सामाजिक भावनाओं की अभिव्यक्ति का सशक्त माध्यम भी रहा है। इसकी आडम्बरहीनता मन को मुग्ध किए बिना नहीं रहती। भावमयता तो इसका प्राण ही है। इसका कथानक दर्शकों में आकर्शण का प्रमुख केन्द्र रहा है। इसके कथानक प्रायः सामाजिक हुआ करते हैं। इनसे समाज में प्रचलित मान्यताओं एवं प्रवृत्तियों का अच्छा दिग्दर्शन प्राप्त होता है। नाचा पूर्ण रूपेण एक जीवन–केन्द्रित लोक–विधा है। जिस प्रामाणिकता से यह सामाजिक जीवन को प्रस्तुत करता है, उसमें कहीं किसी ठौर बनावट की कोई गुंजाइश नहीं रहती। मनोरंजन एवं शिक्षा का जैसा मणि–कांचन संयोग इसमें मिलता है, वैसा अन्यत्र संभव नहीं है। समाज के उत्थान–पतन को रेखांकित करने वाली यह एक आरसी है। इसके सत्याचरण को चुनौती दे पाना मुश्किल है।

छत्तीसगढ़ी नाचा में बहुतायत से व्यंग्य–विद्रुप और सामाजिक परंपरा की भूख पायी जाती है। जिस तरह से निर्गुण, परंपरा के संत कवि निम्न जातियों में से ही आये थे और उन्होंने अभिजात कहें जाने वाले समाज के आडम्बरों का भंडाफोड़ किया था, ठीक उसी प्रकार नाचा पार्टियों में भी निम्न वर्ग के लोगों का ही बाहुल्य होता है। खासकर देवार जाति के लोग निरंतर संघर्ष की ज़िन्दगी जीते आए हैं। समाज में इनका कोई स्थान नहीं होता। हर दृष्टि से सताये इन लोगों की मेहनत के बल पर समाज के उच्च वर्ग के लोग ऐश करते हैं। वर्ग भेद की वो खाई आज भी उतनी ही चौड़ी है, जितनी पहले कभी हुआ करती थी। यही कारण है कि नाचा के माध्यम से समाज में पैसे के बल पर आतंक जमाये रखने वाले लोगों की ग़लत ज़िन्दगी का पर्दाफाश किया जाता है।

नाचा गाँव की चौपाल से निकलकर नगर, महानगर तथा हबीब तनवीर के माध्यम से वैश्विक पटल पर जा पहुँचा है। हबीब तनवीर के जीवीत रहने तक देश–देशांतरों में इसकी धूम मची हुई थी। चार बाँस के बीच चौकोर घेरे से प्रारंभ हुई इसकी यात्रा अन्तरराष्ट्रीय मंच तक जा पहुँची। विकास यात्रा के प्रारंभिक चरण में नाचा के प्रति सभ्य नागरिकों की दृष्टि उपहास जनक रही थी, परन्तु हबीब तनवीर के नाटकों के माध्यम से उनके रंगमच में प्रमुख स्थान बना लेने के कारण अब वह सभ्रांत समाज में प्रतिष्ठित हो

सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग), शासकीय नागार्जुन स्नातकोत्तर विज्ञान महाविद्यालय, रायपुर (छत्तीसगढ़)

चुका है, किन्तु वैश्वीकरण, उपभोक्तावादी संस्कृति की चकाचौंध, फिल्म के दुष्प्रभाव और अब हबीब तनवीर के निधन के बाद छत्तीसगढ़ी लोक नाट्य नाचा को धूल के गुबार ने लपेटना शुरू कर दिया है, लेकिन अभी भी नाचा के सच्चे कलाकार एवं हबीब तनवीर के नया थियेटर के कलाकार गाँवों में छत्तीसगढ़ी लोक संस्कृति को बचाने में अपना अभूतपूर्व योगदान दे रहे हैं, लेकिन, कब तक ? उनके चले जाने के बाद उनके सामने रोजी–रोटी की समस्या पैदा हो गयी है। छत्तीसगढ़ नाचा के कलाकारों में चाहे ठाकुर राम हो अथवा भुलवा, मदन हो अथवा लालू, मन्साराम हो या किस्मत बाई, फिदाबाई हो अथवा वासंती महत्वपूर्ण प्रश्न इनके व्यक्तिगत जीवन का नहीं, बल्कि समूचे कला जगत का है, जिन पीड़ाओं से ये गुजर रहे हैं, वह तकलीफ इस अंचल की रग–रग में बैठी हुई है।

धान का कटोरा कहे जाने वाला छत्तीसगढ़ प्रदेश एक नया प्रदेश है, जहाँ की लोक संस्कृति बहुत समृद्ध रही है। ये उचित समय है, जब हम अपनी लोक संस्कृति को सहेजें। ऐसे दौर में यह और भी ज़रूरी हो जाता है जब भूमंडलीयकरण, उदारीकरण का सुरसा लोक संस्कृति को लील ले रहा है। छत्तीसगढ़ प्रदेश देश के उन थोड़े से लोकाँचलों में अपनी जगह बनाता है, जिनके पास पारंपरिक कलाओं की समृद्ध गठरी है। यदि साइबर युग में भी यह गठरी बँधी हुई और बची हुई है, तो अपनी महक और ऊर्जा के कारण। इससे पहले ये ऊर्जा क्षीर्ण हो जाए, उसे बचाना हम सभी का परम दायित्व है। निर्मल वर्मा ने भी बहुत पहले शताब्दी के ढलते वर्षों में एक बात कही थी, जहाँ वे सुविख्यात नृतत्व शास्त्री लेवी–स्ट्रॉस ने अपने इण्टरव्यू में कहा था कि ''यदि संयोग से रेम्ब्राँ का कोई चित्र नष्ट हो जाता है, तो वह चाहे कितना बड़ा दुर्भाग्य क्यों न हो, हम आशा कर सकते हैं कि हज़ारों वर्ष बाद कभी रेम्ब्राँ की तरह चित्र बन सकेगा, किन्तु जब हम किसी कबीले, किसी ट्राइब या किसी पौधे की नस्ल को नष्ट कर देते हैं, तो वे दुनिया से हमेशा के लिए लोप हो जायेंगे और हम उन्हें फिर कभी अपने अनूठे, विशिष्ट स्वरूप में नहीं प्राप्त कर सकेंगे।''(1) यही बात लोक कलाओं और लोक संस्कृतियों पर भी लागू होती है, जिन्हें खो कर हम उसे पुनः अपने उसी रूप में नहीं प्राप्त कर सकते। अपनी संस्कृति को खो कर मनुष्य न अपने अतीत में झाँक सकता है, न कुछ सीख प्राप्त कर सकता है और न अपने को उत्खनित कर सकता है, क्योंकि उसने अपने को उत्खनित करने के उन औजारों, लोक संस्कृति, लोक भाषा को खो दिया है। लोक संस्कृति, लोक भाषा से हुए इस विलगाव ने उन्हें बौद्धिक रूप से पंगु अथवा नकलची बना दिया है, क्योंकि सांस्कृतिक जीवन की विनष्टता के बिना किसी भी समुदाय अथवा देश की जनता को लम्बे समय तक शासित बनाये रखना संभव नहीं है। जैसा कि अमिल्कर कबराल कहते हैं, किसी देश की जनता पर शासन करने के लिए हथियारों की मदद से ज़्यादा कारगर तरीका यह है कि उसके सांस्कृतिक जीवन को या तो बिल्कुल लकवाग्रस्त कर दिया जाए या समाप्त कर दिया जाए। कारण स्पष्ट है कि अगर देशज सांस्कृतिक जीवन शक्तिशाली रूप में मौजूद रहेगा, तो प्रभुत्वकारी वर्ग कभी निश्चिंत होकर अपना शासन स्थायी नहीं बना सकता।

भारत का सांस्कृतिक जीवन इन दिनों दुनिया के ऐसे समाजों की सूची के शीर्ष पर है, जिस पर बहुराष्ट्रीय निगमों की आसक्त और अपलक आँखें निरंतर लगी हुई हैं। एक अरब इक्कीस करोड़ जनता का खुला बाज़ार उनके सामने पसरा हुआ है। एक अल्प–उपभोगवादी भारतीय प्रवृत्ति को पूरी तरह उपभोक्तावादी बनाने की व्यग्रता से भरने में वे जी–जान से जुट गए हैं। भूमंडलीकरण के कर्णधारों तथा अर्थ व्यवस्था के महाबलीश्वरों के आगमन में आने वाली अड़चनों को खत्म करने के लिए उन्होंने कमर कस ली है। इन अड़चनों की फेहरिस्त में वे तमाम चीज़ें आती हैं, जिनसे राष्ट्रीयता की गंध आती है और यह गंध फैला रही है, हमारी लोक संस्कृति, इतिहास और सभी भारतीय भाषाएँ। अपने देश की जिस नाट्य परंपरा को स्वयं हमने पिछड़ी हुई गंवारू और अनाटकीय कहकर ठुकरा दिया था या हिकारत से देखने लगे थे, उनमें पश्चिम के अनेक प्रतिभावान् रंगकर्मियों को अपने रंगमंच के संकट के हल के लिए कुछ उपयोगी सूत्र नज़र आ रहे थे। उन्हीं सूत्रों को पकड़ कर हबीब तनवीर ने बहुत पहले से नाट्य मंचन में एक चमत्कार भर दिया और नयी ताज़गी ला दी थी। उसी लोकधर्मी नाट्य परंपरा ने भाषाओं की सीमा को लाँघ कर अन्तरराष्ट्रीय मँच पर छत्तीगढ़ी बोली में कही हुई बात को समझने में किसी प्रकार की बाधा का अहसास नहीं होने दिया। हबीब तनवीर ने इसीलिए अपनी लोक संस्कृति को कभी नहीं छोड़ा। अपने रंगकर्म में उन्होंने छत्तीसगढ़ी लोक को पूरी तरह रूपायित किया चाहे भाषा के स्तर पर हो या लोक गीत, लोक नाट्य, लोक संगीत, लोक कथा के स्तर पर हो, उन्हें अपने नये मुहावरे की तलाश की ठौर यहीं आकर प्राप्त हुई, जिसने उन्हें और उनके साथ ही छत्तीसगढ़ के नाम को बुलंदियों के मकाम तक पहुँचा दिया। ये उसी लोक का कमाल था, जिसके कारण उनके नाटकों के शो कभी दर्शकों के मोहताज नहीं हुए। आज उनके नहीं रहने पर छत्तीसगढ़ी लोक के आँगन में धूल का गुबार छाया हुआ है, जिसे बुहारना अपनी संस्कृति को बचाने के लिए बेहद ज़रूरी है। शासन के नीति निर्धारकों को यह समझाया जाना बेहद ज़रूरी है कि उनके संरक्षण और पहल के बिना अपनी समृद्ध लोक संस्कृति वैश्वीकरण के दौर में चाह कर भी बच नहीं सकती, जिसे बचाया जाना आने वाली पीढ़ी के लिए भी बेहद ज़रूरी है। इससे पहले कि हमारी जीवंत लोक संस्कृति मृतप्राय हो म्यूजियम की शोभा बढ़ाने लगे कुछ ठोस कदम उठाना ज़रूरी है। शासन के साथ ही लोक कलाकारों, साहित्यकारों, रंगकर्मियों का भी ये परम दायित्व है कि वे इस दिशा में पहल करें।

संदर्भ :

(1) वर्मा, निर्मल (1985) : ढलान से उतरते हुए, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ. 79.

❁❁

शोध–पत्र लेखिका इसी विषय पर विश्वविद्यालय अनुदान आयोग के माइनर रिसर्च प्रोजेक्ट पर कार्यरत हैं।